



पारंपरिक कुम्हारी कला में कार्यरत महिलाओं की स्थिति

शिवांगी गुप्ता

शोध छात्रा, पॉटरी सिरामिक, मूर्तिकला विभाग
दृश्य कला संकाय, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सारांश

मृद्गांड कला भारत की प्राचीनतम कला परंपराओं में से एक है, जो पारंपरिक ज्ञान, सांस्कृतिक विरासत एवं लोकजीवन का अभिन्न अंग रही है। इस कला के संरक्षण, संवर्धन तथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरण में महिलाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। महिलाएँ अपने दैनिक घरेलू कार्यों के साथ-साथ मिट्टी के चयन एवं तैयारी, मृद्गांडों के निर्माण, अलंकरण, रंग-सज्जा, मूर्तियों एवं उपयोगी वस्तुओं के सजावटी कार्य, भट्ठी से संबंधित सहायक कार्यों तथा उत्पादों के विपणन तक विभिन्न स्तरों पर सक्रिय योगदान देती हैं। इसके बावजूद उनके श्रम को प्रायः उचित आर्थिक मूल्य, औपचारिक पहचान तथा सामाजिक सम्मान प्राप्त नहीं हो पाता। वर्तमान समय में डिज़ाइन नवाचार, ई-कॉमर्स, डिजिटल विपणन तथा सरकारी कौशल विकास एवं माटी कला प्रोत्साहन योजनाओं ने कुम्हारी कला में नए अवसर सृजित किए हैं। इन पहलों के माध्यम से महिलाओं की आर्थिक आत्मनिर्भरता, उद्यमिता तथा सामाजिक पहचान को सुदृढ़ करने की दिशा में नई संभावनाएँ विकसित हुई हैं। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य पारंपरिक कुम्हारी कला में कार्यरत महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थिति का विश्लेषण करना तथा यह समझना है कि पारंपरिक ज्ञान और समकालीन नवाचार उनके जीवन, कार्य-प्रक्रिया एवं आजीविका को किस प्रकार प्रभावित कर रहे हैं। यह अध्ययन महिला सशक्तिकरण, पारंपरिक शिल्प संरक्षण तथा सतत विकास के संदर्भ में महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत करने का प्रयास करेगा, जिससे कुम्हारी कला में कार्यरत महिलाओं की स्थिति को अधिक सम्मानजनक एवं सशक्त बनाने के लिए उपयोगी सुझाव प्राप्त हो सकें। प्रस्तुत अध्ययन गुणात्मक शोध दृष्टिकोण पर आधारित है, जिसमें वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध पद्धति का प्रयोग किया जाएगा। अध्ययन हेतु आवश्यक तथ्यों का संकलन क्षेत्रीय अध्ययन, प्रत्यक्ष अवलोकन तथा कुम्हारी कला से जुड़ी महिलाओं के साक्षात्कार के माध्यम से किया गया है।

मुख्य शब्द: पारंपरिक ज्ञान, समकालीन नवाचार, कुम्हारी कला, महिला सशक्तिकरण, महिला कलाकार, लोक शिल्प।

भारतीय उपमहाद्वीप में प्राचीन काल से विकसित सांस्कृतिक एवं शिल्प परंपराएँ आज भी विभिन्न रूपों में जीवित हैं। कृषि, पशुपालन, स्थापत्य, खान-पान तथा मृद्गांड कला जैसी परंपराएँ भारतीय समाज की सांस्कृतिक निरंतरता एवं लोकजीवन की सशक्त अभिव्यक्ति हैं। विशेष रूप से मृद्गांड कला भारतीय सभ्यता की उन प्राचीन लोककलाओं में से एक है, जिसने समय के साथ अनेक सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों का सामना करते हुए अपनी विशिष्ट पहचान बनाए रखी है। वर्तमान समय में भी पारंपरिक कुम्हार समुदाय द्वारा अपनाई जाने वाली

तकनीकों, कार्य-विधियों तथा निर्माण प्रक्रियाओं के आधार पर प्राचीन भारतीय मृद्भांड निर्माण की तकनीकी दक्षता एवं कलात्मक परंपरा का अनुमान लगाया जा सकता है।

मृद्भांड निर्माण केवल तकनीकी प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह सामाजिक संरचना, सांस्कृतिक परंपराओं, धार्मिक आस्थाओं, स्थानीय मान्यताओं तथा पारिवारिक ज्ञान-परंपरा से गहराई से जुड़ा हुआ शिल्प है। मिट्टी का चयन, उसका परिष्करण, आकार-निर्माण, अलंकरण, भट्टी में पकाना तथा उत्पादों का उपयोग, इन सभी प्रक्रियाओं में स्थानीय संस्कृति एवं समुदाय की जीवनशैली का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। यही कारण है कि भारत के विभिन्न क्षेत्रों में कुम्हारी कला की शैली, आकृति एवं अलंकरण में क्षेत्रीय विविधता परिलक्षित होती है।

भारतीय समाज के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में महिलाओं की भूमिका सदैव अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। परिवार, समाज तथा राष्ट्र के विकास की आधारशिला महिला ही होती है। एक सशक्त महिला न केवल परिवार के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को सुदृढ़ बनाती है, बल्कि सांस्कृतिक परंपराओं एवं पारंपरिक ज्ञान के संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है। किसी भी राष्ट्र के विकास का आकलन वहाँ की महिलाओं की सामाजिक, शैक्षिक एवं आर्थिक स्थिति के आधार पर किया जा सकता है।

पारंपरिक कुम्हारी कला से जुड़ी महिलाएँ भी इसी परिस्थिति का हिस्सा हैं। यद्यपि वे मृद्भांड निर्माण की लगभग प्रत्येक प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभाती हैं और इस प्राचीन शिल्प परंपरा को पीढ़ी-दर-पीढ़ी संरक्षित रखने में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं, फिर भी उन्हें उनके श्रम के अनुरूप आर्थिक प्रतिफल, सामाजिक सम्मान तथा स्वतंत्र पहचान प्रायः प्राप्त नहीं हो पाती।

भारतीय कुम्हारी कला का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भारतीय कला एवं सांस्कृतिक विरासत के विविध आयामों में कुम्हारी कला का विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण स्थान रहा है। यह मानव सभ्यता के विकास के साथ निरंतर विकसित होने वाली उन प्राचीन शिल्प परंपराओं में से है, जिनमें उपयोगिता और कलात्मक अभिव्यक्ति का सहज समन्वय दिखाई देता है। मिट्टी से निर्मित



मातृदेवी, राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली ,स्रोत-शोधकर्ता द्वारा

पात्र, खिलौने, मृण्मूर्तियाँ तथा अन्य वस्तुएँ प्राचीन भारतीय समाज में केवल दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन नहीं थीं, बल्कि धार्मिक विश्वासों, सामाजिक जीवन तथा तत्कालीन सौंदर्यबोध की अभिव्यक्ति का माध्यम भी थीं। पुरातात्विक स्थलों से प्राप्त मृद्भांडों एवं मृण्मय अवशेषों के अध्ययन से प्राचीन समाज की तकनीकी दक्षता, जीवन-पद्धति और सांस्कृतिक दृष्टिकोण को समझने में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है। सिंधु सभ्यता का विस्तार पश्चिम में वर्तमान पाकिस्तान के मकरान तट स्थित सुतकागेंडोर से लेकर पूर्व में उत्तर प्रदेश के आलमगीरपुर, दक्षिण में महाराष्ट्र के दैमाबाद

तथा उत्तर में जम्मू क्षेत्र के मांडाखनूर तक माना जाता है। इसके प्रमुख नगरीय केंद्रों हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के उत्खनन से प्राप्त पुरावशेषों ने इस सभ्यता की समृद्ध सांस्कृतिक एवं कलात्मक परंपरा को स्पष्ट किया। इन स्थलों से विविध आकार-प्रकार के मृद्गांड प्राप्त हुए हैं, जिनमें नुकीली पेंदी वाले पात्र, कुंडाकार बर्तन, लंबी गर्दन वाले घड़े, बोलतनुमा पात्र तथा बिना हथ्थे के लोटे आदि उल्लेखनीय हैं। ये अवशेष तत्कालीन कुम्हारों की तकनीकी दक्षता और विकसित सौंदर्यबोध को दर्शाते हैं। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो जैसे प्रमुख नगरों के उत्खननों से विभिन्न आकार एवं प्रकार के पात्र, मृणमूर्तियाँ तथा खिलौने प्राप्त हुए हैं। इन मृद्गांडों में लाल सतह पर काले रंग से बनाए गए ज्यामितीय, वनस्पति एवं अन्य रूपांकन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। मोहनजोदड़ो से प्राप्त अनेक पात्रों पर लाल स्लिप के ऊपर काले रंग से चित्रांकन के प्रमाण मिलते हैं, जो तत्कालीन कुम्हारों की तकनीकी दक्षता और सज्जात्मक दृष्टि को दर्शाते हैं। हड़प्पा सभ्यता में मृद्गांड निर्माण एक विकसित एवं सुव्यवस्थित शिल्प परंपरा के रूप में दिखाई देता है। प्रारंभिक चरणों में हस्तनिर्मित पात्रों के साथ आगे चलकर कुम्हार के चाक का प्रयोग व्यापक हुआ, जिससे पात्रों के आकार, अनुपात और निर्माण में अधिक एकरूपता आई। लाल स्लिप पर काले रंग से किए गए ज्यामितीय एवं वनस्पति-आधारित अलंकरण तत्कालीन कलात्मक दक्षता को दर्शाते हैं। मृद्गांडों को पकाने के लिए विभिन्न प्रकार की भट्टियों एवं संरचनाओं का प्रयोग किया जाता था। इससे स्पष्ट होता है कि हड़प्पाकालीन कुम्हारों को मिट्टी, आकार-निर्माण, अग्नि, ताप तथा वायु-संचरण से संबंधित तकनीकी ज्ञान प्राप्त था।

पारंपरिक कुम्हारी कला में महिलाओं की भूमिका

कुम्हार के चाक पर पात्रों को आकार देने का कार्य प्रायः पुरुषों द्वारा किया जाता है, किंतु पात्र निर्माण की संपूर्ण प्रक्रिया महिलाओं के सहयोग के बिना पूर्ण नहीं होती। महिलाएँ मिट्टी के चयन एवं उसकी तैयारी, मिट्टी को गूँथने, तैयार पात्रों को सुखाने, सतह को परिष्कृत करने तथा विभिन्न प्रकार के अलंकरण एवं नक्काशी में

आजमगढ़ ब्लैक पॉटरी, शोधकर्ता द्वारा सक्रिय भूमिका निभाती हैं।

अनेक क्षेत्रों में वे प्राकृतिक रंगों से पात्रों की सज्जा, मिट्टी के खिलौनों एवं लघु मूर्तियों के निर्माण तथा धार्मिक एवं लोक-आधारित वस्तुओं को अंतिम रूप देने का कार्य भी करती हैं। भट्टी की तैयारी, ईंधन की व्यवस्था तथा पकाए गए उत्पादों की छँटाई जैसे कार्यों में भी उनका सहयोग देखा जाता है। महिलाओं की भूमिका केवल कुम्हारी कला की उत्पादन प्रक्रिया तक सीमित नहीं है, बल्कि स्थानीय बाजारों, मेलों, प्रदर्शनियों तथा सरकारी स्तर पर आयोजित विभिन्न उत्सवों में तैयार उत्पादों के विक्रय



और ग्राहकों से प्रत्यक्ष संवाद स्थापित करने में भी महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। पारंपरिक आकृतियों, अलंकरण पद्धतियों, स्थानीय रंगों तथा सजावटी तकनीकों के संरक्षण और विकास में उनका अनुभवजन्य ज्ञान विशेष महत्व

रखता है। इसके अतिरिक्त वे इस कौशल को पारिवारिक स्तर पर एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित करके कुम्हारी कला की निरंतरता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इसके बावजूद, उत्पादन और विपणन के विभिन्न चरणों में सक्रिय सहभागिता के बाद भी महिलाओं को उनकी भूमिका के अनुरूप सामाजिक पहचान एवं सम्मान प्राप्त नहीं हो पाता। पारंपरिक सामाजिक संरचना में उनके श्रम को प्रायः घरेलू कार्य के रूप में देखा जाता है और उनकी स्वतंत्र शिल्पकार के रूप में पहचान अपेक्षाकृत सीमित रहती है। इसके विपरीत, पुरुषों को कुम्हारी कला का प्रमुख कारीगर माना जाता है। इस प्रकार महिलाओं के वास्तविक श्रम, कौशल और रचनात्मक योगदान तथा उन्हें प्राप्त सामाजिक मान्यता के बीच एक स्पष्ट अंतर दिखाई देता है। यह स्थिति कुम्हारी कला में लैंगिक असमानता और महिला श्रम के अपर्याप्त मूल्यांकन की ओर संकेत करती है।

महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति

पारंपरिक कुम्हारी कला की उत्पादन प्रक्रिया में महिलाओं की व्यापक सहभागिता के बावजूद उनके श्रम और योगदान को हमेशा स्वतंत्र आर्थिक एवं सामाजिक पहचान प्राप्त नहीं हो पाता। पारिवारिक शिल्प व्यवस्था में महिलाओं द्वारा किया जाने वाला



राष्ट्रीय शिल्प संग्रहालय, नई दिल्ली, स्रोत-सहपाठी द्वारा

कार्य प्रायः घरेलू जिम्मेदारियों का हिस्सा मान लिया जाता है, जिसके कारण उनके श्रम का स्वतंत्र आर्थिक मूल्यांकन नहीं हो पाता। परिणामस्वरूप उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान देने के बावजूद अनेक महिला कारीगरों की आय, संपत्ति पर अधिकार तथा आर्थिक निर्णय लेने की क्षमता सीमित रहती है।

इसके अतिरिक्त कच्चे माल की बढ़ती लागत, आधुनिक मशीन निर्मित वस्तुओं से प्रतिस्पर्धा, बाजार तक सीमित पहुँच, बिचौलियों पर निर्भरता, तकनीकी प्रशिक्षण का अभाव तथा डिजिटल विपणन की सीमित जानकारी जैसी समस्याएँ उनकी आर्थिक स्थिति को प्रभावित करती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक एवं पारिवारिक दायित्व भी महिलाओं के व्यावसायिक विस्तार में बाधा बन सकते हैं। दूसरी ओर, स्वयं सहायता समूहों, कौशल विकास कार्यक्रमों, आधुनिक उपकरणों, डिज़ाइन प्रशिक्षण तथा प्रत्यक्ष डिजिटल बाजारों से जुड़ाव ने महिला कारीगरों के लिए नई संभावनाएँ उत्पन्न की हैं। यदि इन अवसरों तक महिलाओं की समान एवं प्रभावी पहुँच सुनिश्चित की जाए, तो कुम्हारी कला उनके लिए केवल पारंपरिक आजीविका का माध्यम न रहकर आर्थिक आत्मनिर्भरता, उद्यमिता और सामाजिक सशक्तिकरण का प्रभावी साधन बन सकती है।

नए अवसर एवं सरकारी पहल

भारत सरकार तथा उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा हाल के वर्षों में पारंपरिक कुम्हारी कला के संरक्षण, संवर्धन और उससे जुड़े कारीगरों की आजीविका को सुदृढ़ करने के लिए विभिन्न स्तरों पर अनेक पहल की गई हैं। इन पहलों का प्रमुख उद्देश्य पारंपरिक कौशल एवं ज्ञान को आधुनिक तकनीक, कौशल प्रशिक्षण तथा वर्तमान बाजार की आवश्यकताओं के साथ जोड़ना है। इस दिशा में प्रधानमंत्री विश्वकर्मा योजना, कुम्हार सशक्तिकरण कार्यक्रम, माटी कला से संबंधित राज्य स्तरीय पहल, कौशल विकास कार्यक्रम तथा 'वन डिस्ट्रिक्ट वन प्रोडक्ट' जैसी योजनाएँ महत्वपूर्ण हैं। इनके माध्यम से कारीगरों को कौशल प्रशिक्षण, आधुनिक उपकरण, वित्तीय सहायता तथा बाजार से जुड़ने के अवसर उपलब्ध कराने का प्रयास किया जा रहा है।

इसके अतिरिक्त, हस्तशिल्प मेले, प्रदर्शनियाँ, शिल्प उत्सव तथा सरकारी एवं संस्थागत बिक्री केंद्र कारीगरों को अपने उत्पादों के प्रत्यक्ष प्रदर्शन और विपणन के लिए मंच प्रदान करते हैं। इन पहलों से पारंपरिक कुम्हारी उत्पादों को व्यापक उपभोक्ता वर्ग तक पहुँचाने तथा स्थानीय शिल्प को नए बाजार से जोड़ने की संभावनाएँ बढ़ी हैं। विशेष रूप से महिला कुम्हारों के संदर्भ में इन योजनाओं का महत्व और अधिक है, क्योंकि प्रशिक्षण, आधुनिक उपकरण, वित्तीय संसाधन तथा प्रत्यक्ष बाजार तक पहुँच उन्हें पारिवारिक श्रम की पारंपरिक भूमिका से आगे बढ़कर स्वतंत्र शिल्पकार एवं उद्यमी के रूप में पहचान स्थापित करने का अवसर प्रदान कर सकती है। इस प्रकार सरकारी एवं संस्थागत प्रयास पारंपरिक कुम्हारी कला के संरक्षण के साथ-साथ इसमें कार्यरत महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण और सामाजिक पहचान को मजबूत करने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

महिला सशक्तिकरण में कुम्हारी कला की भूमिका



कुम्हारी कला केवल एक पारंपरिक हस्तशिल्प नहीं है, बल्कि यह ग्रामीण एवं अर्ध-शहरी क्षेत्रों में कार्यरत महिलाओं के आर्थिक और सामाजिक सशक्तिकरण का एक महत्वपूर्ण माध्यम भी बन रही है। परंपरागत रूप से कुम्हार समुदाय में महिलाओं की भूमिका मिट्टी तैयार

राष्ट्रीय शिल्प संग्रहालय, नई दिल्ली, स्रोत-सहपाठी द्वारा

करने से लेकर मृदाभांड को तैयार करने के विभिन्न कार्यों तक सीमित रही है। समय के साथ बदलते परिवेश में आर्थिक परिस्थितियों, कौशल विकास कार्यक्रमों, स्वयं सहायता समूहों, सरकारी योजनाओं तथा डिजिटल माध्यमों के विस्तार के कारण महिलाओं की यह भूमिका अधिक सक्रिय

और उद्यमशील होती जा रही है। इससे उन्हें अपने पारंपरिक कौशल के आधार पर आय अर्जित करने तथा आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के अवसर मिलते हैं।

कुम्हारी कला अपेक्षाकृत कम संसाधनों में स्वरोजगार की संभावनाएँ उपलब्ध कराती है। प्रशिक्षण और आधुनिक तकनीक के साथ महिलाएँ घरेलू स्तर पर उत्पादन इकाइयाँ विकसित कर सकती हैं। उनकी आय परिवार की आर्थिक



आवश्यकताओं, विशेषकर शिक्षा, स्वास्थ्य एवं दैनिक जीवन-यापन में योगदान देती है, जिससे परिवार के निर्णयों में उनकी भागीदारी बढ़ती है। इसके साथ ही महिलाएँ मिट्टी के चयन, निर्माण तकनीक, पारंपरिक रूपांकनों और अलंकरण संबंधी ज्ञान को अगली पीढ़ी तक पहुँचाकर सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। स्वयं सहायता समूहों, प्रशिक्षण कार्यक्रमों और डिजिटल विपणन के माध्यम से महिला कारीगरों के लिए उद्यमिता एवं व्यापक बाजार की संभावनाएँ भी विकसित हुई हैं। परिणामस्वरूप उनकी सामाजिक पहचान केवल पारिवारिक भूमिका तक सीमित न रहकर कुशल कारीगर और उद्यमी के रूप में सुदृढ़ हो रही है।

निष्कर्ष

कुम्हारी कला को केवल पुरुष-केंद्रित पारंपरिक व्यवसाय के रूप में देखना उचित नहीं होगा। इसके निर्माण, परिष्कार, सज्जा और पारिवारिक स्तर पर ज्ञान के हस्तांतरण में महिलाओं की सहभागिता लंबे समय से रही है। महिला कारीगरों का योगदान इस कला की निरंतरता, पारंपरिक तकनीकों के संरक्षण और परिवार-आधारित उत्पादन व्यवस्था को बनाए रखने में महत्वपूर्ण रहा है। अतः भारतीय कुम्हारी परंपरा के अध्ययन में महिलाओं की भूमिका को स्वतंत्र एवं महत्वपूर्ण विमर्श के रूप में सम्मिलित किया जाना आवश्यक है। क्षेत्रीय अध्ययन के दौरान महिला कारीगरों से किए गए साक्षात्कार से यह तथ्य सामने आया कि सरकारी योजनाओं एवं संस्थागत पहलों का लाभ महिला कारीगरों तक आंशिक एवं अवसरानुसार पहुँच रहा है। साक्षात्कार में शामिल कारीगरों ने बताया कि उन्हें कभी-कभी सरकारी योजनाओं के माध्यम से आर्थिक सहायता प्राप्त होती है तथा विभिन्न हस्तशिल्प मेलों, प्रदर्शनियों एवं महोत्सवों में भाग लेने के अवसर भी मिलते हैं। विशेष रूप से विभिन्न क्षेत्रों की विशिष्ट पारंपरिक मृद्गांड कलाओं को उनके मूल क्षेत्र से बाहर आयोजित होने वाले आयोजनों में प्रदर्शित करने के लिए कारीगरों को आमंत्रित किया जाता है। उदाहरणतः निजामाबाद की ब्लैक पॉटरी, गोरखपुर की टेराकोटा तथा अन्य क्षेत्रीय मृद्गांड परंपराओं के कारीगरों को ऐसे आयोजनों के माध्यम से अपने उत्पादों को व्यापक दर्शक एवं संभावित बाजार तक पहुँचाने का अवसर मिलता है। पुडुचेरी, आगरा एवं गोरखपुर की महिला कुम्हार से लिए गए साक्षात्कार में भी यह सामने आया कि उन्हें सरकारी संस्थाओं के माध्यम से विभिन्न आयोजनों में आमंत्रित किया गया, जिससे उनकी कला को व्यापक स्तर पर प्रदर्शित करने का अवसर मिला। हालांकि, उनके अनुभव के अनुसार सरकारी योजनाओं से मिलने वाला प्रत्यक्ष आर्थिक लाभ नियमित अथवा पर्याप्त नहीं है, फिर भी समय-समय पर मिलने वाली सहायता, प्रदर्शनियों में सहभागिता और विपणन के अवसर उनके लिए उपयोगी सिद्ध होते हैं।

इस प्रकार क्षेत्रीय साक्षात्कार से यह निष्कर्ष निकलता है कि सरकारी पहलें महिला कारीगरों के लिए प्रत्यक्ष आर्थिक सहायता के साथ-साथ बाजार, प्रदर्शन और पहचान के अवसर उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। हालांकि इन योजनाओं का लाभ अधिक व्यापक और निरंतर बनाने के लिए उनकी पहुँच, जानकारी, प्रशिक्षण, विपणन सहायता और संस्थागत सहयोग को और मजबूत किए जाने की आवश्यकता है।



संदर्भ सूची

- अग्रवाल, वासुदेव शरण, (1977), भारतीय कला: प्रारंभिक युग से तीसरी सदी ईस्वी तक (द्वितीय संस्करण), पृथ्वी प्रकाशन।
- सिंह, उपेंद्र, (2025), प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन भारत का इतिहास: पाषाण काल से 12वीं शताब्दी तक (द्वितीय संस्करण)।
- ललित कला अकादमी, (2006), समकालीन कला: पॉटरी (अंक 30, जुलाई-अक्टूबर 2006), ललित कला अकादमी।
- पटेल, कमला. (2022). औद्योगिक क्षेत्र में महिलाओं का बढ़ता योगदान. International Journal of Humanities and Social Science Research, 8(1), 40–41.
- IndiaFilings. (2026, June 24). Kumbhar Sashaktikaran Program – Gramodyog Vikas Yojana (GVY). IndiaFilings□
- Kalita, J., & Gokhale, S. (2019). Challenges faced by women folk artists in Lower Assam. International Journal of Research and Analytical Reviews, 6(1).
- Lagavi. The saga of women in pottery. Lagavi
- People's Archive of Rural India. Women at the wheel in the Nilgiris. People's Archive of Rural India□
- Press Information Bureau, Government of India. (2021, September 17). On Prime Minister's birthday, KVIC launches series of schemes to empower artisans in Varanasi. Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises. Press Information Bureau□
- UNESCO. (2025, September 30). Women's pottery: Sustaining identity and tradition in Tehuacán-Cuicatlán. UNESCO
- Kalita, J., & Gokhale, S. (2024). Challenges faced by women folk artists in Lower Assam. International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR), 6(4). <https://www.ijfmr.com>